

न्यायालय संख्या-44

वाद :- आपराधिक अपील संख्या 4083/2017

याचिकाकर्ता:- पिटू गुप्ता

प्रत्यर्थी :-उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता :-श्री धर्मेन्द्र कुमार सिंह, श्री राजेश यादव

प्रत्यर्थी के लिए अधिवक्ता :- शासकीय अधिवक्ता

माननीय न्यायमूर्ति डॉ. कौशल जयेंद्र ठाकर,

माननीय न्यायमूर्ति अजय त्यागी,

1. आपराधिक अपील संख्या 707/2020 हितेश वर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य दिनांक 5.11.2020 को निर्णित हुआ।
2. आपराधिक अपील क्रमांक 1283/2019 खुमान सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य दिनांक 27.8.2019 को निर्णित हुआ।
3. आपराधिक अपील संख्या 8196/2008 जय करन उर्फ पप्पू बनाम उत्तर प्रदेश राज्य दिनांक 10.11.2021 को निर्णित हुआ।
4. आपराधिक अपील संख्या 204/2021 विष्णु बनाम उत्तर प्रदेश राज्य दिनांक 28.1.2021 को निर्णित हुआ।
5. राम दास बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, एआईआर 2007 एससी 155
6. धर्मेन्द्र बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2011 सीआरआई एलजे 204 (सभी)
7. गुजरात राज्य बनाम मुन्ना, 2016 सीआरआई एलजे 4097 (गुजरात)
8. मो. गियासुद्दीन बनाम मध्य प्रदेश राज्य, [एआईआर 1977 एससी 1926]
9. देव नारायण मंडल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [(2004) 7 एससीसी 257]
10. रावदा शशिकला बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य एआईआर 2017 एससी 1166
11. जमील बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [(2010) 12 एससीसी 532]
12. गुरु बसवराज बनाम कर्नाटक राज्य [(2012) 8 एससीसी 734]
13. सुमेर सिंह बनाम सूरजभान सिंह, [(2014) 7 एससीसी 323]
14. पुंज राज्य. बनाम बावा सिंह, [(2015) 3 एससीसी 441]
15. राज बाला बनाम हरियाणा राज्य, [(2016) 1 एससीसी 463]

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

(माननीय डॉ. कौशल जयेंद्र ठाकर, जे. द्वारा दिया गया)

1. अभियुक्त-अपीलकर्ता के विद्वान वकील श्री राजेश यादव और विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता श्री नागेंद्र श्रीवास्तव, श्री अखिलेश कुमार त्रिपाठी द्वारा सहायता प्राप्त, विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता राज्य के लिए को सुना गया।
2. यह अपील तृतीय अपर सत्र न्यायाधीश, कोर्ट संख्या 4, जौनपुर द्वारा सत्र विचारण संख्या 74/20211 में आरोपी-अपीलकर्ता, पिंटू गुप्ता को धारा 326 की भारतीय दंड संहिता, 1860 (इसके बाद 'आईपीसी' के रूप में संदर्भित) और धारा 3 (2) (v) अनुसूचित जाति एवं जनजाति अधिनियम की धाराओं के तहत दोषी ठहराए जाने के दिनांक 13.6.2017 के फैसले और आदेश को चुनौती देती है। आरोपी-अपीलकर्ता को धारा 326 भारतीय दण्ड संहिता के तहत 10 साल के कठोर कारावास और 25,000/- रुपये के जुर्माने की सजा और धारा 3(2) (V) अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 (इसके बाद एससी/एसटी अधिनियम के रूप में संदर्भित) के तहत आजीवन कारावास एवं 10,000/- रुपये जुर्माने की सजा सुनाई गई। दोनों अपराधों के लिए डिफॉल्ट सज़ा एक-एक वर्ष का कठोर कारावास थी। सजा की तारीख 14.6.2017 थी।
3. रिकार्ड से निकले संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि लिखित रिपोर्ट के आधार पर प्रथम सूचना रिपोर्ट घायल के अस्पताल में भर्ती होने के कारण घायल के पिता द्वारा दिनांक 29.1.2011 को आरोपी के खिलाफ मामला दर्ज कराया गया। घायल को बोटल, जिसमें कुछ तरल पदार्थ था, जिसे एसिड बनाया जा रहा है, से मारकर घायल कर दिया गया और घायल को इलाज के लिए ले जाया गया। प्रथम सूचना रिपोर्ट में कहा गया है कि घटना के समय अभियुक्त-पिंटू गुप्ता की उम्र 20 वर्ष थी और घायल-संजू कुमार बेनवंशी, अर्थात् सूचनादाता का पुत्र, की उम्र 18 वर्ष थी। प्रथम सूचना रिपोर्ट में यह भी आरोप लगाया गया था कि घटना को देखते हुए लोगों में हड़कंप मच गया और लोग इधर-उधर भागने लगे। आरोपियों ने जैसे ही घायल के चेहरे पर तेजाब छिड़का तो उसका चेहरा बुरी तरह झुलस गया और कुछ देर के लिए उसकी आंखों की रोशनी चली गई। प्रथम सूचना रिपोर्ट 29.1.2011 को दर्ज की गई थी। घटना शाम साढ़े छह बजे की है जब लोग दुकानों पर बैठे चाय पी रहे थे। महिलाएं अपने बच्चों के साथ सब्जी व अन्य किराना सामान खरीद रही थीं।
4. पुलिस ने R.W.2 अर्थात् घायलों के बयान दर्ज करने के बाद, चिकित्सा पेशेवरों अर्थात् डॉ. प्रभा शंकर चतुर्वेदी, जिन्होंने घायल का इलाज किया था और पुलिस अधिकारियों ने 4.2.2011 को आरोपी के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया।

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

5. चूंकि मामला सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय था इसलिए आरोपी को सेशन न्यायालय को सौंप दिया गया। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने 27.4.2012 को अभियुक्त पर आरोप तय किये। अभियुक्त ने स्वयं को निर्दोष बताया और मुकदमा चलाने की इच्छा व्यक्त की।

6. आरोप साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष ने 7 गवाहों की जांच की जो इस प्रकार हैं:

1	राजेंद्र बेनवंशी	अभियोजन गवाह 1
2	संजू कुमार बेनवंशी	अभियोजन गवाह 2
3	डॉ. प्रभा शंकर चतुर्वेदी	अभियोजन गवाह 3
4	डॉ. आर.ए. चक्रवर्ती	अभियोजन गवाह 4
5	जयन्ती लाल	अभियोजन गवाह 5
6	विजेन्द्र गिरि	अभियोजन गवाह 6
7	नरेन्द्र प्रताप सिंह	अभियोजन गवाह 7

7. नेत्र संस्करण के समर्थन में निम्नलिखित दस्तावेज़ दायर किए गए:

1	प्रथम सूचना रिपोर्ट	प्रदर्श क-9
2	लिखित रिपोर्ट	प्रदर्श क-1
3	फर्द बरामदगी एसिड की बोतल के टुकड़े और आधे जले हुए घास	प्रदर्श क-5
4	सर्वे मेमो और बरामद पैंट	प्रदर्श क-6
5	चोट रिपोर्ट	प्रदर्श क-2
6	बेड हेड टिकट	प्रदर्श क-3
7	आरोप पत्र	प्रदर्श क-12
8	साइट प्लान अनुक्रमणिका के साथ	प्रदर्श क-11

8. न्यायालय ने कयाम मेहंदी नाम के एक गवाह का भी परीक्षण किया। अभियुक्त-अपीलकर्ता का धारा 313, दण्ड प्रक्रिया संहिता में परीक्षण किया गया। और सत्र न्यायाधीश का फैसला 13.6.2017 को सुनाया गया और 14.6.2017 को सजा का आदेश दिया गया।

9. यह अपील जुलाई, 2017 में दायर की गई और इस न्यायालय द्वारा स्वीकार कर ली गई। अभियुक्त 2.2.2011 से जेल में है, अर्थात्, वह विचाराधीन कैदी था और मुकदमे के दौरान उसे जमानत पर रिहा नहीं किया गया था।

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

10. जहां तक तथ्यात्मक पहलुओं का सवाल है, अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने कहा है कि धारा 326 भारतीय दण्ड संहिता नहीं बनती है क्योंकि चोटें ऐसी नहीं हैं जो धारा 326 भारतीय दण्ड संहिता के दायरे में आएंगी। अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने आगे कहा कि भले ही यह साबित हो जाए कि धारा 326 भारतीय दण्ड संहिता के तहत अपराध बनता है, सजा अधिक है जिसे संशोधित करने की आवश्यकता है।

11. जहां तक धारा 3 (2) (वी) एससी/एसटी अधिनियम के तहत अपराध का सवाल है, विद्वान वकील द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि प्रथम सूचना रिपोर्ट में कहीं भी यह नहीं कहा गया कि घायल एक विशेष समुदाय का है। इसे साबित करने के लिए कोई दस्तावेजी सबूत मौजूद नहीं है। यह साबित करने के लिए दस्तावेजी साक्ष्य कि घायल अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का है, जांच अधिकारी या सत्र न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है। अपीलकर्ता के वकील के अनुसार भी इस बारे में कुछ भी नहीं बताया गया है, हालांकि कहा जाता है कि यह घटना सार्वजनिक स्थान पर हुई थी। अभियोजन पक्ष द्वारा घायल के पिता को छोड़कर किसी भी स्वतंत्र गवाह से पूछताछ नहीं की गई है, जिनकी घटना स्थल पर उपस्थिति बहुत संदिग्ध है, क्योंकि उनके मुख्य परीक्षण में उन्होंने कहा था कि उन्हें नहीं पता कि घटना क्यों घटित हुई। अपने बयान में, उन्होंने उल्लेख किया है कि उन्हें इस बात की जानकारी नहीं है कि अभियुक्त-अपीलकर्ता, पिंटू भी घायल हुआ था या नहीं। उनका स्पष्ट कथन है कि पुलिस अधिकारी ने उनके बेटे से पूछताछ की लेकिन उन्होंने इस तथ्य से इनकार किया है, उन्होंने अपनी मौखिक गवाही में यह उल्लेख नहीं किया है कि चूंकि वह एक विशेष समुदाय से हैं, इसलिए घटना हुई थी। आगे यह प्रस्तुत किया गया है कि पी.डब्ल्यू.2, घायल ने यह भी उल्लेख नहीं किया है कि यह घटना उसके समुदाय के कारण हुई थी। आगे यह प्रस्तुत किया गया है कि P.W.2 ने अपनी मौखिक गवाही में कहा है कि उक्त घटना से पहले, आरोपी-अपीलकर्ता उससे नियमित रूप से मिलता था। उन्होंने यह भी कहा है कि जब घटना घटी तो दुकान पर कुछ लोग चाय पी रहे थे और घटना स्थल पर महिलाएं सब्जियां सजा रही थीं। यह कहा गया है कि पुलिस प्राधिकारी के समक्ष, धारा 161 दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत, पी.डब्ल्यू.2 ने केवल यह कहा है कि आरोपी-अपीलकर्ता, पिंटू गुप्ता ने उसे पीटा था और इसलिए, धारा 3 (2) (वी) एससी/एसटी अधिनियम के तहत कोई मामला नहीं बनता है। आगे यह प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा तथ्य की खोज अनुमानों और अटकलों पर आधारित है।

12. अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने आपराधिक अपील संख्या 707/2020 हितेश वर्मा बनाम उत्तराखंड राज्य और एक अन्य, दिनांक 5.11.2020 को निर्णित हुआ और आपराधिक अपील संख्या 1283/2019 (खुमान सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य) पर 27.8.2019 को निर्णित हुआ, में शीर्ष न्यायालय के फैसलों पर भरोसा किया है और अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने इस न्यायालय के निर्णयों जो आपराधिक अपील संख्या 8196/2008 (जय करण @ पप्पू बनाम यूपी राज्य) में को निर्णित हुआ और आपराधिक अपील संख्या 204/2021 (विष्णु बनाम यूपी राज्य) में

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

28.1.2021 को निर्णित हुआ को भी प्रस्तुत किया ताकि दावा किया जा सके कि धारा 3(2)(v) के प्रावधान एससी/एसटी एक्ट नहीं बनता है और आरोपी को बरी किया जाना चाहिए क्योंकि प्रथम सूचना रिपोर्ट या गवाही में इसका कोई उल्लेख नहीं है कि घटना घटित हुई क्योंकि घायल अनुसूचित जाति के थे। विद्वान वकील ने आगे कहा कि धारा 3 (2) (V) एससी/एसटी अधिनियम को लागू करने की सामग्री साबित नहीं हुई है और निर्णय केवल यह मानता है कि घायल होने वाला दोषी अनुसूचित जाति का है।

13. अपर शासकीय अधिवक्ता द्वारा हमें P.W.2 और P.W.3 की गवाही के माध्यम से ले जाया गया है ताकि धारा 3 (2) (v) एससी/एसटी अधिनियम के प्रावधानों का तर्क दिया जा सके

बनता है क्योंकि घायल और घायल के पिता अनुसूचित जाति के हैं और इसलिए उपरोक्त धारा के तहत दोषसिद्धि उचित और संगत है और **खुमान सिंह, जय करण और विष्णु (सुप्रा)** में अपीलकर्ता के वकील द्वारा उद्धृत निर्णय इस मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होंगे और एससी/एसटी अधिनियम के तहत दोषसिद्धि बरकरार रहेगी।

14. एससी/एसटी अधिनियम की धारा 3 (2) (v) इस प्रकार है:

"3. अत्याचार के अपराधों के लिए दंड.--

(1).....XX.....XX.....

(2) जो कोई, अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य न होते हुए,--

(i).....XXX.....

(ii).....XX.....

(iii).....XXX.....

(iv).....XXX.....

(v) भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के तहत किसी व्यक्ति या संपत्ति के खिलाफ इस आधार पर दस साल या उससे अधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय कोई अपराध करता है कि ऐसा व्यक्ति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य है या ऐसी संपत्ति ऐसे सदस्य की है, आजीवन कारावास और जुर्माने से दण्डित किया जाएगा।"

15. आम तौर पर हम प्रथम सूचना रिपोर्ट के महत्व पर चर्चा नहीं करते हैं। लेकिन, यह एक उत्कृष्ट मामला है जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट आवश्यक है के तथ्य और महत्व पर चर्चा की गई है। धारा 154 दण्ड प्रक्रिया संहिता आवश्यक होगा जो इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

"154. संज्ञेय मामले में सूचना -

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

(1) किसी संज्ञेय अपराध के घटित होने से संबंधित प्रत्येक जानकारी, यदि किसी पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को मौखिक रूप से दी गई है, तो उसके द्वारा या उसके निर्देशन में लिखित रूप में दी जाएगी, और सूचनादाता को पढ़कर सुनाई जाएगी; और ऐसी प्रत्येक जानकारी, चाहे वह लिखित रूप में दी गई हो या पूर्वोक्त रूप से लिखित रूप में दी गई हो, उसे देने वाले व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित किया जाएगा, और उसके सार को ऐसे अधिकारी द्वारा रखी जाने वाली एक पुस्तक में ऐसे प्रारूप में दर्ज किया जाएगा जैसा कि राज्य सरकार निर्धारित कर सकती है। इस निमित्त.

(2) उप-धारा (1) के तहत दर्ज की गई जानकारी की एक प्रति सूचना देने वाले को तुरंत निःशुल्क दी जाएगी।

(3) उपधारा (1) में निर्दिष्ट जानकारी को रिकॉर्ड करने के लिए पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी की ओर से इनकार करने से व्यथित कोई भी व्यक्ति ऐसी जानकारी का सार लिखित रूप में और डाक द्वारा, पुलिस अधीक्षक को भेज सकता है। संबंधित पुलिस, यदि संतुष्ट है कि ऐसी जानकारी संज्ञेय अपराध के घटित होने का खुलासा करती है, तो या तो स्वयं मामले की अन्वेषण करेगी या इस संहिता द्वारा प्रदान किए गए तरीके से अपने अधीनस्थ किसी पुलिस अधिकारी को अन्वेषण करने का निर्देश देगी, और ऐसे अधिकारी को उस अपराध के संबंध में पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी की सभी शक्तियाँ होगी जो ऐसा करेगा।"

16. मामले की प्रथम सूचना रिपोर्ट, घायल के पिता द्वारा दर्ज करायी गयी थी। क्या यह कहा जा सकता है कि दिन के उजाले में हुई घटना इस आधार पर थी कि घायल 'अनुसूचित जाति' या 'अनुसूचित जनजाति' शब्द के अंतर्गत आने वाले एक विशेष समुदाय से हैं, ताकि धारा 3 (2) (v) SC/ST एक्ट. के प्रावधान को आकर्षित किया जा सके।

इस पहलू पर प्रथम सूचना रिपोर्ट पूरी तरह से शांत है। अपराधी और घायल किस जाति के हैं, इसे दर्शाने वाले दस्तावेजी सबूत रिकॉर्ड में नहीं लाए गए हैं। धारा 3 (2) (v) एससी/एसटी अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिए, यह साबित करने के लिए दस्तावेजी साक्ष्य के माध्यम से पुष्टि की जानी चाहिए कि घायल, जिसके ऐसा कृत्य किया गया है, 'अनुसूचित जाति' या 'अनुसूचित जाति' से संबंधित है। सिर्फ इसलिए कि कोई व्यक्ति ऐसा कहता है, क्या यह सबूत का एक टुकड़ा होगा? यह किसी का मामला नहीं है कि अपीलकर्ता ने यह अपराध इस आधार पर किया कि घायल एक विशेष समुदाय से हैं। यदि हम यह मान भी लें कि कोई दस्तावेजी सबूत नहीं है और घायल उसी समुदाय का है, जैसा वह बता रहा है तो भी क्या यह कहा जा सकता है कि अपराध किया गया है क्योंकि वह एक विशेष समुदाय का है? यह एक यक्ष प्रश्न है जो हमारे सामने उठता है।

17. राम दास बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, एआईआर 2007 एससी 155 में, जिसमें अनुसूचित जाति की महिला के साथ बलात्कार हुआ था, यह माना गया था कि धारा 3 (2) (v) के तहत आरोपी को दोषी ठहराने का कोई आधार नहीं हो सकता है। धारा 3 (2) (v) एससी/एसटी अधिनियम के तहत आरोप का समर्थन करने के लिए कोई सबूत

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

नहीं था। केवल इस तथ्य पर कि पीड़िता अनुसूचित जाति की लड़की थी, एससी/एसटी अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होते।

18. धर्मेन्द्र बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2011 सीआरआई एलजे 204 (सभी) में, न्यायालय ने माना है कि रिकॉर्ड पर कोई सबूत नहीं था जो यह दर्शाए कि घटना आरोपी द्वारा इस आधार पर कारित की गई थी कि पीड़िता अनुसूचित जाति से थी। पीड़िता का अनुसूचित जाति से संबंधित होना अपने आप में मामले को अधिनियम की धारा 3 (2) (v) के दायरे में लाने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है। धारा 3(2)(v) के तहत दोषसिद्धि अनुचित थी।

19. गुजरात राज्य बनाम मुन्ना, 2016 सीआरआई एलजे 4097 (गुजरात) में, न्यायालय ने निम्नानुसार कहा:

"वर्तमान मामले में, जहां तक धारा 3 (2) (v) अत्याचार अधिनियम, 1989 के तहत दंडनीय अपराध के लिए आरोपी के खिलाफ आरोप का सवाल है, गवाहों के बयान से यह सामने नहीं आया कि आरोपी मृतक के खिलाफ इस आधार पर अपराध किया कि मृतक अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य था। ऐसे सबूतों के अभाव में यह नहीं कहा जा सकता है कि मूल आरोपी ने धारा 3 (2) (v) अत्याचार अधिनियम, 1989 के तहत दंडनीय अपराध किया था। इन परिस्थितियों में रिकॉर्ड के साक्ष्य के आधार पर आरोपी को उपरोक्त अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता है।"

20. हममें से एक (न्यायमूर्ति डॉ. के.जे. ठाकर,) द्वारा लेखबद्ध **विष्णु (सुप्रा)** के मामले में इस न्यायालय की डिवीजन बेंच का निर्णय इस प्रकार है:

"38. धारा 3(2)(v) अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 का संबंध है, हालांकि प्रथम सूचना रिपोर्ट और सबूत बताते हैं कि आरोपी द्वारा कोई भी एक या कोई कार्य इस आधार पर किया गया था अभियोक्ता अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की सदस्य थी तो आरोपी को उक्त प्रावधान के तहत अपराध करने के लिए दोषी ठहराया जा सकता है। विद्वान विचारण न्यायाधीश ने कहा है भौतिक रूप से गलती हुई है क्योंकि उन्होंने इस बात पर चर्चा नहीं की है कि इस बात का क्या सबूत है कि अभियोक्ता की जाति के कारण यह कृत्य किया गया था। पीड़िता की भाभी ने ऐसे मामले दर्ज कराए थे, उसके पति और ससुर ने भी शिकायत दर्ज कराई थी। हम विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता की इस दलील को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि आरोपी पूरी तरह से जानता था कि पीड़िता जीवन के निचले तबके से है और इसलिए उसने उसे ऐसी मानसिक पीड़ा पहुंचाई जो अत्याचार की धारा 3(2)(v) के प्रावधान को आकर्षित करेगी। विद्वान न्यायाधीश के तर्क रिकॉर्ड के विरुद्ध हैं और विकृत हैं क्योंकि विद्वान न्यायाधीश ने रिकॉर्ड पर बिना किसी सबूत के खुद महसूस किया है कि जघन्य अपराध इसलिए किया गया क्योंकि अभियुक्त ने अभियोजन पक्ष की इच्छा पर कब्जा कर लिया था और क्योंकि पुलिस अधिकारी ने जांच की थी यह मामला एक अत्याचार के मामले के रूप में है जिसे अत्याचार अधिनियम की धारा

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

3(2)(v) के दायरे में नहीं लिया जाएगा और अधिनियम की धारा 3(2)(v) के तहत दोषसिद्धि दर्ज की गई है जिसे कायम नहीं रखा जा सकता है। **पुदव भाई अंजना पटेल बनाम गुजरात राज्य** के मामले में आपराधिक अपील संख्या 74/2006 में न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति कौशल जयेंद्र ठाकर (जैसा कि वह) द्वारा 8.9.2015 को निर्णय दिया गया था, में गुजरात उच्च न्यायालय के फैसले से हम अपने विचार का समर्थन करते हैं। (जैसा वह तब था)

39. विद्वान न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि चूंकि पीड़िता अनुसूचित जाति में आने वाले समुदाय से थी और अपीलकर्ता उच्च जाति में आता था, इसलिए वर्तमान मामले में एससी/एसटी अधिनियम के प्रावधान आकर्षित होते हैं।

40. प्रथम सूचना रिपोर्ट से लेकर पीडब्लू-1, 2 और 3 के बयानों तक के पूरे सबूतों का अध्ययन करते समय हम यह नहीं पाते हैं कि अपराध इस तथ्य के कारण हुआ था कि अभियोक्ता एक निश्चित समुदाय से थी।

41. विद्वान न्यायाधीश ने अभियुक्त के धारा 313 के तहत दर्ज किए गए बयान में कोई सवाल नहीं उठाया है बलात्कार या बयान से संबंधित जो उसके खिलाफ है।

42. रिकॉर्ड पर मौजूद तथ्यों और सबूतों के मद्देनजर, हम आश्चर्य नहीं कि आरोपी को गलत तरीके से दोषी ठहराया गया है, इसलिए, दिए गए फैसले और आदेश को उलट दिया जाता है और आरोपी को बरी कर दिया जाता है। यदि आरोपी अपीलकर्ता पर किसी अन्य मामले में वारंट नहीं है, तो उसे तुरंत रिहा किया जाए।"

21. मौजूदा मामले में, किसी भी स्वतंत्र गवाह से पूछताछ नहीं की गई है जो यह गवाही दे कि आरोपी ने इस आधार पर अपराध किया है कि घायल एससी/एसटी अधिनियम के तहत आने वाले समुदाय से थे। यह चूक ऐसे महत्वपूर्ण मामले में अभियोजन पक्ष के लिए घातक साबित होती है जहां सजा आजीवन कारावास की होती है। विद्वान न्यायाधीश ने साक्ष्यों पर चर्चा तक नहीं की और केवल जाति के आधार पर यह माना कि अपराध घटित हुआ है। एससी/एसटी एक्ट के तहत कोई उपबन्धित प्रावधान नहीं है। उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हम विद्वान सत्र न्यायाधीश से सहमत नहीं हो सकते क्योंकि विद्वान न्यायाधीश के समक्ष जो साक्ष्य रखे गए हैं, उन्हें विद्वान सत्र न्यायाधीश ने गलत तरीके से पढ़ा है और उन्होंने एससी/एसटी एक्ट की धारा 3 (2) (v) के प्रावधान को गलत समझा है। आरोपी अपीलकर्ता की धारा 3 (2) (v) के तहत दोषसिद्धि और सजा को इसलिए खारिज किया जाता है

22. यह हमें धारा 326 के तहत अपराध करने की ओर ले जाता है। धारा 326 भारतीय दण्ड संहिता को इस प्रकार पढ़ा जाता है:

"326. खतरनाक हथियारों या साधनों द्वारा स्वेच्छा से गंभीर चोट पहुंचाना - जो भी, धारा 335 द्वारा प्रदान किए गए मामले को छोड़कर, गोली चलाने, छुरा घोंपने या काटने के लिए किसी उपकरण, या किसी भी उपकरण के

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

माध्यम से स्वेच्छा से गंभीर चोट पहुंचाता है, जिसका उपयोग एक के रूप में किया जाता है अपराध का हथियार, जिससे मृत्यु होने की संभावना है, या आग या किसी गर्म पदार्थ के माध्यम से, या किसी जहर या किसी संक्षारक पदार्थ के माध्यम से, या किसी विस्फोटक पदार्थ के माध्यम से, या किसी ऐसे पदार्थ के माध्यम से जिसे साँस लेना, निगलना मानव शरीर के लिए हानिकारक है, या खून में या किसी भी जानवर के माध्यम से शामिल होने पर 1[आजीवन कारावास] से दंडित किया जाएगा, या किसी उस अवधि के लिए कारावास से दंडित किया जाएगा जिसे दस साल तक बढ़ाया जा सकता है, और जुर्माना भी लगाया जा सकता है। "

23. इस मामले में सबूत पी.डब्ल्यू.1 और पी.डब्ल्यू.2 चिकित्सा साक्ष्यों और इस तथ्य के साथ कि घायलों के चेहरे पर जलने की चोटें थीं, यह दर्शाता है कि घायलों को गंभीर चोटें लगी थीं। धारा 326 भारतीय दण्ड संहिता के प्रावधान स्वैच्छिक रूप से खतरनाक हथियारों या साधनों से गंभीर चोट पहुंचाने से संबंधित हैं। इस मामले में एसिड से भरी कांच की बोतल को अपराध के हथियार और/या ऐसे पदार्थ के रूप में इस्तेमाल किया गया था जो मानव शरीर के लिए हानिकारक है और इसलिए, धारा 326 भारतीय दण्ड संहिता के तहत मामला बनता है। धारा 320, छठी, "सिर या चेहरे की स्थायी विकृति" को 'गंभीर चोट' के रूप में निर्दिष्ट करती है जो धारा 326 भारतीय दण्ड संहिता के तहत दंडनीय है। वर्तमान अपराध उक्त श्रेणी में आता है और इसलिए, हम अपीलकर्ता के वकील की इस दलील को मानने में असमर्थ हैं कि धारा 326 भारतीय दण्ड संहिता के तहत कोई मामला नहीं बनता है।

24. यह हमें अपीलकर्ता के विद्वान वकील के वैकल्पिक अनुरोध पर ले जाता है कि सजा की मात्रा बहुत कठोर है और इसे संशोधित करने की आवश्यकता है। इस संबंध में हमें भारत में प्रचलित दंड सिद्धांत का विश्लेषण करना होगा।

25. मोहम्मद गयासुद्दीन बनाम. आंध्र प्रदेश राज्य, [एआईआर 1977 एससी 1926], में पुनर्वास और सुधारात्मक पहलुओं की व्याख्या करते हुए सज़ा सुनाते हुए उच्चतम न्यायालय ने यह देखा:

"अपराध एक पैथोलॉजिकल विषय है। अपराधी को आम तौर पर छुड़ाया जा सकता है और राज्य को बदला लेने के बजाय उसका पुनर्वास करना होगा। जो उप-संस्कृति असामाजिक व्यवहार की ओर ले जाती है, उसका मुकाबला अनुचित क्रूरता से नहीं, बल्कि पुनर्संस्कृति द्वारा किया जाना चाहिए। इसलिए, व्यक्ति में पेनोलॉजी में रुचि का ध्यान और लक्ष्य उसे समाज के लिए बचाना है। इस प्रकार कठोर और क्रूर दंड देना अतीत और प्रतिगामी समय का अवशेष है। मानव आज एक ऐसे व्यक्ति को फिर से आकार देने की प्रक्रिया के रूप में सजा देता है जो बिगड़ गया है आपराधिकता और आधुनिक समुदाय की सामाजिक सुरक्षा के साधन के रूप में अपराधी के पुनर्वास में प्राथमिक हिस्सेदारी है। इसलिए हमारे आपराधिक न्यायालयों में 'आतंकवाद में' दृष्टिकोण के बजाय एक चिकित्सीय दृष्टिकोण लागू होना चाहिए, क्योंकि व्यक्ति की क्रूर कैद केवल उसके दिमाग पर चोट पैदा करती है। यदि आपको किसी

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

व्यक्ति को प्रतिशोधात्मक रूप से दंडित करना है, तो आपको उसे घायल करना होगा। यदि आप उसे सुधारना चाहते हैं, तो आपको उसे सुधारना होगा और, लोग चोटों से नहीं सुधरते हैं।"

26. देवनारायण मंडल बनाम. उत्तर प्रदेश राज्य [(2004)7 एससीसी 257] में 'उचित वाक्य' की व्याख्या की गई थी यह देखते हुए कि वाक्य अत्यधिक कठोर या हास्यास्पद रूप से कम नहीं होना चाहिए। सजा की अवधि निर्धारित करते समय अदालत को 'आनुपातिकता के सिद्धांत' को ध्यान में रखना चाहिए। सजा किसी दिए गए मामले के तथ्यों पर आधारित होनी चाहिए। अपराध की गंभीरता, अपराध करने का तरीका, आरोपी की उम्र और लिंग को ध्यान में रखा जाना चाहिए। सज़ा देने में न्यायालय के विवेक का प्रयोग मनमाने ढंग से या मनमर्जी से नहीं किया जा सकता।

27. सुप्रीम कोर्ट ने रावडा शशिकला बनाम राज्य में ए.पी. एआईआर 2017 एससी 1166, में जमील बनाम यूपी राज्य [(2010) 12 एससीसी 532], गुरु बसवराज बनाम कर्नाटक राज्य, [(2012) 8 एससीसी 734], सुमेर सिंह बनाम सूरजभान सिंह, [(2014) 7 एससीसी 323] में दिए गए फैसलों का हवाला दिया। पंजाब राज्य बनाम बावा सिंह, [(2015) 3 एससीसी 441], और राज बाला बनाम हरियाणा राज्य, [(2016) 1 एससीसी 463] निर्णयों को उल्लिखित किया है और दोहराया है कि, सजा प्रणाली के संचालन में, कानून को तथ्यात्मक मैट्रिक्स पर आधारित सुधारात्मक मशीनरी या निरोध को अपनाना चाहिए। प्रत्येक मामले में तथ्य और परिस्थितियाँ, अपराध की प्रकृति, जिस तरह से इसकी योजना बनाई गई और प्रतिबद्ध किया गया, अपराध करने का मकसद, अभियुक्तों का आचरण, इस्तेमाल किए गए हथियारों की प्रकृति और अन्य सभी परिस्थितियाँ प्रासंगिक तथ्य हैं जो विचार के क्षेत्र में प्रवेश करेंगी। इसके अलावा, सजा सुनाने में अनुचित सहानुभूति न्याय व्यवस्था को और अधिक नुकसान पहुंचाएगी और कानून की प्रभावकारिता में जनता के विश्वास को कमजोर करेगी। अपराध की प्रकृति और उसके करने के तरीके को ध्यान में रखते हुए उचित सजा देना प्रत्येक न्यायालय का कर्तव्य है। उच्चतम न्यायालय ने आगे कहा कि अदालतों को केवल अपराध के पीड़ित के अधिकार को ध्यान में रखना चाहिए, बल्कि बड़े पैमाने पर समाज को भी ध्यान में रखना चाहिए। उचित दंड देने पर विचार करते समय, समग्र रूप से समाज पर अपराध के प्रभाव और कानून के शासन को संतुलित करने की आवश्यकता है। देश में न्यायिक प्रवृत्ति सुधार और सजा के बीच संतुलन बनाने की रही है। समाज की सुरक्षा और आपराधिक प्रवृत्ति पर रोक लगाना कानून का उद्देश्य होना चाहिए जिसे अपराधियों और गलत काम करने वालों पर उचित सजा देकर हासिल किया जा सकता है। व्यवस्था और शांति बनाए रखने के एक उपकरण के रूप में कानून को समाज के सामने आने वाली चुनौतियों का प्रभावी ढंग से सामना करना चाहिए, क्योंकि समाज अपराध और असामंजस्य के गंभीर खतरों के तहत लंबे समय तक टिक नहीं सकता है और विकास नहीं कर सकता है। इसलिए, सजा को थोपने में अनुचित उदारता से बचना आवश्यक है। इस प्रकार, देश में अपनाया गया आपराधिक न्यायशास्त्र प्रतिशोधात्मक नहीं बल्कि सुधारात्मक और

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

संशोधात्मक है। साथ ही, हमारी आपराधिक न्याय प्रणाली में अंतर्निहित सुधारात्मक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए अनुचित कठोरता से भी बचा जाना चाहिए।

28. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और हमारे देश में आपराधिक न्यायशास्त्र को ध्यान में रखते हुए, जो सुधारात्मक और संशोधात्मक है और प्रतिशोधात्मक नहीं है, यह न्यायालय मानता है कि कोई भी आरोपी व्यक्ति सुधार करने में असमर्थ नहीं है और इसलिए, उन्हें सामाजिक धारा में लाने के लिए और सुधार का अवसर देने के लिए सभी उपाय किए जाने चाहिए।

29. जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, 'दंड के सुधारात्मक सिद्धांत' को अपनाया जाना है और इस कारण से, 'आनुपातिकता के सिद्धांत' को ध्यान में रखते हुए दंड देना आवश्यक है। आक्षेपित निर्णय के अवलोकन से ऐसा प्रतीत होता है कि मामले के संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों तथा अपराध की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए निचली अदालत द्वारा दी गई आजीवन कारावास की सजा बहुत कठोर है। जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, पान्नीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि आपराधिक न्याय प्रणाली में अंतर्निहित सुधारात्मक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए अनुचित कठोरता से बचा जाना चाहिए।

30. उपरोक्त के मद्देनजर, जहां तक धारा 326 भारतीय दण्ड संहिता के तहत अपराध का सवाल है, 10 साल की कैद की सजा बहुत कठोर है और 25000/- रुपये का जुर्माना भी बहुत कठोर है। हम सजा को घटाकर 9 साल की कैद और जुर्माने को 2000/- रुपये कर देते हैं, कारण यह है कि शिकायतकर्ता और घायलों को सरकार द्वारा पर्याप्त मुआवजा दिया गया होगा क्योंकि उन्होंने धारा 3 (2) (V) एससी/एसटी अधिनियम के प्रावधानों को लागू किया है। हम उक्त राशि की वापसी का निर्देश नहीं देते हैं, हालांकि हम धारा 3 (2) (वी) एससी/एसटी अधिनियम के तहत निर्दोष बरी दर्ज करते हैं। हम डिफॉल्ट सजा को भी घटाकर एक महीना कर देते हैं।

31. अभियुक्त-अपीलकर्ता जेल में है। यदि 9 साल की कैद पूरी हो गई है, तो उसे तुरंत रिहा कर दिया जाएगा, यदि किसी अन्य अपराध में वारंट न हो। डिफॉल्ट सजा कारावास के 9वें वर्ष के पूरा होने के बाद प्रभावी होगी और यदि डिफॉल्ट सजा की अवधि भी समाप्त हो गई है, तो उसे जुर्माना देने की आवश्यकता नहीं है। रिकॉर्ड विचारण न्यायालय को प्रेषित किया जाएगा।

आदेश दिनांक:- 28.07.2022

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

Translated version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"